सन्मति साहित्य-रत्न ५

जैन कन्या शिक्षा

चौथा भाग

[चौथी कक्षा के लिये]

लेखक
उपाध्याय पं० मुनि श्री अमरचन्द्र जी

सन्मति ज्ञानपीठ,
आगरा।

मू० ॥)

प्रकाशक
सन्मति ज्ञानपीठ,
लोहामण्डी, आगरा।

मुद्रक
कलाधर शर्मा, एम० ए०
निराला प्रेस
आगरा।

निवेदन

जैन कन्या शिक्षा का यह चौथा भाग आप की सेवा में उपस्थित है। बहुत दिनों से समाज की ओर से जो माग चल रही थी, हर्ष है कि जैन-समाज के एक माने हुए विद्वान् श्रद्धेय उपाध्याय पं० मुनि श्री अमरचन्द्र जी महाराज द्वारा आज वह पूर्ण हो गई है। उपाध्याय श्री जी ने बाल-मनोविज्ञान को ध्यान में रखकर बहुत ही सरल और सरस ढंग से धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा-पाठों की योजना की है।

रतनलाल जैन,
मन्त्री
सन्मति ज्ञानपीठ,
लोहामंडी, आगरा।

विषय-सूची



दयामय ! ऐसी मति हो जाय
त्रिभुवन की कल्याण-कामना,
दिन-दिन बढ़ती जाय

औरों के सुख को सुख समझें,
सुख का करें उपाय,
अपने दुख सब सहें, किन्तु पर,
दुख नहिं देखा जाय।
भूला भटका उलटी मति का,
जो है जन-समुदाय,
उसे सुझाएं सच्चा सत्पथ,
निज सर्वस्व लगाय।
सत्य धर्म हो, सत्य कर्म हो,
सत्य ध्येय बन जाय,
सत्य साधना में ही मेरी,
जीवन सब लग जाय।

२

जीवों के भेद

जीव किसे कहते हैं ? जीव का क्या लक्षण है ? यह तुम पिछले 'जीव और अजीव' वाले पाठ से अच्छी तरह समझ गई होगी। याद है, जीव का क्या स्वरूप बताया गया था ? याद न हो, तो लो अब फिर याद करलो :—

"जिसमें ज्ञान हो, जानने और समझने की ताकत हो, जिसे सुख-दुःख का अनुभव होता हो, वह जीव कहलाता है।"

अच्छा अब तुम्हें यह बताया जाय कि जीव कितने हैं ? क्या तुम गिन सकोगी ? नहीं तुम नहीं गिन सकोगी, क्योंकि जीव गिनती से बाहर हैं। जीवों की गिनती हो ही नहीं सकती। इसीलिए भगवान् महावीर ने कहा है कि 'जीव अनन्त हैं।' अनन्त का अर्थ है, 'जिसका अन्त न हो, जिसकी गिनती न हो।'

जीव अनन्त हैं, परन्तु वे दो भागों में बाँटे जा सकते हैं। एक मुक्त और दूसरे संसारी। ये जीवों के दो प्रकार हैं, दो भेद हैं।

१—मुक्त जीव

मुक्त जीव उन्हें कहते हैं, जो संसार से छूट गए हैं, मोक्ष में पहुंच गए हैं; जो फिर कभी संसार में नहीं फंसते हैं, जन्म मरण नहीं करते हैं, जिनको एक भी कर्म का बन्धन नहीं है, जो सब प्रकार से सदा के लिए शुद्ध हो गए हैं।

मुक्त जीवों का न शरीर होता है, और न कोई रूप रङ्ग होता है। भूख-प्यास, रोग शोक आदि कोई भी किसी भी तरह का दुःख वहाँ कभी भी नहीं होता। मोक्ष में आत्मा केवल शुद्ध आत्मा ही रहता है और कुछ भी दुनियावी पदार्थ नहीं रहता।

मुक्त जीव कौन होते हैं?—इस प्रश्न का उत्तर तुम्हें बता दूँ। भगवान् ऋषभदेव आदि चौबीस तीर्थं अब मोक्ष में हैं, इसलिए मुक्तजीव हैं। अब ये जन्म म

के बन्धन से सदा के लिए छूट गए हैं। पुराने काल में रामचन्द्रजी, हनुमानजी, गौतम स्वामीजी तथा जम्बू स्वामीजी आदि मोक्ष पाकर मुक्त जीव हो गए हैं।

२—संसारी जीव

अब रहे दूसरी तरह के संसारी जीव। संसारी जीव वे हैं, जो कर्म के बन्धनों में बँधे हुए हैं, जो संसार में जन्म-मरण करते हैं।

संसारी जीव मुक्त जीवों से बिल्कुल उलटी तरह के हैं। मुक्त जीव शुद्ध हैं, तो संसारी जीव अशुद्ध। मुक्त जीव शरीर से और रोग शोक आदि दुःखों से बिल्कुल रहित हैं, तो संसारी जीव शरीर वाले हैं और रोग शोक आदि दुःखों से घिरे हुए हैं। संसारी का मतलब है, संसार में बँधा रहने वाला प्राणी।

संसारी जीव कौन होते हैं?—इस प्रश्न का उत्तर भी तुम्हें समझा दूँ। इस संसार में जो भी गाय, भैंस, घोड़ा, ऊँट आदि पशु हैं, सब संसारी जीव कहलाते हैं। आकाश में उड़ने वाले हंस, तोता और कोयल आदि

जितने भी पक्षी हैं, सब संसारी जीव हैं। और तो
आग, जल, हवा, वृक्ष, कीड़ा, मकोड़ा, मक्खी, म
देवता, नारकी, और मनुष्य आदि सब संसारी जी
एकेन्द्रिय जीवों से लेकर पंचेन्द्रिय जीवों तक
संसारी जीव हैं।

अभ्यास

१—जीवों के कितने भेद हैं?
२—मुक्त जीव किसे कहते हैं?
३—संसारी जीव का क्या लक्षण है?
४—संसारी जीव कौन कौन से हैं?
५—मनुष्य और पशु आदि संसारी हैं या मुक्त?

मंगल आचार

१—पूज्य जनों की सेवा करना,
लघु जन से करना नित प्यार।
नीच जनो के संग न रहना,
है यह उत्तम मंगलाचार॥

२—मात-पिता का आदर करना,
रखना सब विधि शिष्टाचार।
चरणों में नित वन्दन करना,
है यह उत्तम मंगलाचार॥

३—दान-धर्म के प्रेमी बनना,
रखना हर दम चित्त उदार।
दीन दुखी की पीड़ा हरना,
है यह उत्तम मंगलाचार॥

४—मन, वाणी, तन को शुभ रखना,
रखना सब सुन्दर व्यवहार !
लक्ष्य एक जिन-पद का रखना,
है यह उत्तम मंगलाचार !!

५—क्षमाशील मितिभाषी बनना,
वाणी में मधु का संचार !
है यह उत्तम मंगलचार,
है यह उत्तम मंगलाचार !!

६—सब जीवों पर निशि दिन करना,
अपनी ममता का विस्तार !
सत्य, शील पर अविचल रहना,
है यह उत्तम मंगलाचार !!

७—सीधा-साधा रहन-सहन हो,
हो न कहीं भी ज़रा विकार !
रहे सदा जागृत मानवता,
है यह उत्तम मंगलाचार !!

४

पढ़ना क्यों चाहिये

आज मैं तुम्हें एक बहुत सुन्दर बात बताता हूँ। तुम अभी बच्ची हो, अपने हित और अनहित की बात अच्छी तरह नहीं समझ सकती हो। परन्तु सदा बच्ची ही तो न रहोगी! तुम्हें अपने भविष्य को शानदार तथा सुखमय बनाने के लिए अभी से प्रयत्न करना चाहिए। अगर अभी से तुमने इस ओर ध्यान न दिया तो तुम्हें पछताना पड़ेगा।

हाँ, तो अपने भविष्य को शानदार तथा सुखमय बनाने का क्या साधन है? वह साधन और कुछ नहीं, अध्ययन है, पढ़ना है। भविष्य में यह व्यर्थ का खेलना-कूदना, लड़ना झगड़ना, खाना-पीना, सुन्दर-सुन्दर ओढ़ना पहनना, कुछ काम नहीं आएगा। जब भविष्य में तुम्हें सुख सुविधा की जरूरत होगी, सम्मान और आदर की अपेक्षा होगी, प्रेम और स्नेह की आवश्यकता होगी, तब ये सब क्या कौड़ियाँ खेलने, ताश खेलने या

गुड़ियाँ खेलने से मिलेंगे ? इनसे कुछ नहीं मिलेगा
याद रखो, ये सब मन लगा कर पढ़ने से ही मिलेंगे !

तुम अभी पढ़ने का मूल्य नहीं समझतीं । इसलिये तुम्हारा पढ़ने को जी नहीं चाहता । परन्तु जब तुम पढ़ने का मूल्य समझा करोगी, तब तुम्हें ऐसा जान पड़ेगा कि पढ़ने में सुस्ती करके हमने भारी भूल की है जो लड़कियाँ अब नहीं पढ़ती हैं, वे आगे बड़ी होने प पछताया करती हैं, कि—हम पढ़ी होतीं तो आज सुन्दर सुन्दर धार्मिक पुस्तकें पढ़कर नित नया ज्ञान प्राप्त करतीं, हम पढ़ी होतीं तो आज अपने पति या किसी रिश्तेदार की चिट्ठी दूसरों से क्यों पढ़ानी पड़ती, हम पढ़ी होती तो दूसरों का भला करतीं, हम पढ़ी होतीं तो अपने मा बाप और भाई बहनों की तथा पति और बच्चों की दशा सुधार कर उन्हें अधिक सुखी बनातीं, हम पढ़ी होतीं तो हमारी आँखों में नया तेज आ जाता और अज्ञान का पर्दा उठ जाता ।

विद्या का स्थान, संसार के सब पदार्थों में ... और श्रेष्ठ स्थान है । विद्या-धन का कभी नाश ... होता । दूसरों को देने से यह घटती नहीं, वरन् ...

जाती है। विद्या वह गुप्त धन है, जिसे न चोर चुरा सकता है और न राजा छीन सकता है। विद्या से हीन मनुष्य की गिनती पशुओं में की जाती है। जिस घर में विद्या का निवास है, उस घर में सदा सुख, शान्ति, सदाचार और धन धान्य का निवास है। जहाँ इसका प्रकाश नहीं है, वहाँ सदा कलह, फूट और निरादर आदि दुर्गुणों का ही डेरा जमा रहता है। भगवान् महावीर ने भी मानव-जीवन में ज्ञान को ही पहला स्थान दिया है। जैन-धर्म मानता है–बिना ज्ञान के शान्ति नहीं।

यह याद रक्खो कि वही कन्या सुखी होगी, वही माता-पिता की दुलारी रहेगी, और वही परिवार की प्यारी बनेगी, जो पढ़ी-लिखी है, बुद्धिमती है, और उसी से कुल की शोभा भी है। जो कन्या पढ़ी-लिखी नहीं है, वह भले ही रूपवती हो, गहनों से लदी रहती हो, सुन्दर रेशमी कपड़े पहनती हो, परन्तु अनपढ़ होने के कारण कहीं भी आदर नहीं पाती। उसका सभी जगह तिरस्कार और उपहास होता है।

विद्या पढ़ने की यही अवस्था है। अगर अभी आलस्य करोगी तो आगे इसका फल अच्छा नहीं

रहेगा। अभी बचपन में तुम पर कोई घर के काम-काज की फिक्र नहीं है, तुम्हारा मन भी साफ है, परिश्रम भी अच्छा हो सकता है आगे ज्यों ज्यों आयु बढ़ी होती जायगी, ज्यों-ज्यों चिन्ता और जंजाल बढ़ता जायगा, त्यों त्यों मन और शरीर की अस्वस्थता के कारण लगन घटती जायगी, फलतः विद्या प्राप्त करना कठिन हो जायगा। यही सुन्दर अवसर है, इससे लाभ उठाओ।

अभ्यास

१—पढ़ने से क्या लाभ है ?
२—विना पढ़ी स्त्री कैसे पछताती है ?
३—कौनसी चीज है, जो देने से बढ़ती है ?
४—आदर किस चीज से मिलता है ?
५—बताओ, तुम क्य करोगी ?

५

जीवों की पांच जाति

जाति का अर्थ—वर्ग है, विभाग है। जो पदार्थ एक जैसे हों, उनको एक जाति के कहते हैं। सब मनुष्य मनुष्य रूप से एक हैं, इसलिये सब मनुष्योंके लिये मानव जाति शब्द का प्रयोग किया जाता है। मनुष्य चाहे कैसे ही काले, गोरे, हिन्दुस्तानी, यूरोपियन, अमरीकन और हब्शी वग़ैरह हों, परन्तु सबका आकार, शक्ल सूरत एक जैसी ही है, इसलिये सब मनुष्य कहे जाते हैं। इसी प्रकार पशु-जाति, पक्षी-जाति, वृक्ष-जाति आदि के सम्बन्ध में भी समझ लेना चाहिये।

ऊपर का वर्णन तुम्हें समझाने केलिये लिखा है। यहाँ इस वर्णन से हमारा कोई सीधा सम्बन्ध नहा है। हम यहाँ मानव जाति या पशु जाति आदि की बाबत कुछ नहीं लिख रहे हैं। यह वर्णन केवल 'जाति' शब्द का भाव समझाने के लिए है, और हमें आशा है, यह भाव तुम अच्छी तरह समझ गई होगी।

जैन-धर्म में जीवों के मुख्य रूप से दो भेद बताए गए हैं, संसारी और मुक्त। इन दोनों का वर्णन अच्छी तरह किया जा चुका है। अगर याद न रहा हो तो यहाँ संक्षेप से फिर याद कर लीजिये। संसारी जीव वे हैं, जो अभी संसार में ही मौजूद हैं, मोक्ष नहीं पा सके हैं। और मुक्त वे हैं, जो संसार में नहीं हैं, जन्म मरण से सदा के लिये छूट गए हैं, मोक्ष में पहुँच गए हैं।

अब यहाँ इस पाठ में संसारी जीवों का वर्णन किया जाता है। इन्द्रियों के भेद से सबके सब संसारी जीव पाँच प्रकार के होते हैं। जैनधर्म में इन पांच प्रकार के जीवों के समूह को जाति का नाम दिया है। भगवान् महावीर ने बताया है कि सबके सब संसारी जीवों की पाँच जातियाँ हैं। भगवान् के कहने का यह अभिप्राय है कि सबके सब संसारी जीव पाँच जातियों में हैं, यानी पाँच भागों में बँटे हुए हैं।

ये पाँच जाति इस प्रकार हैं— (१) एकेन्द्रिय जाति=एक इन्द्रिय जीव (२) द्वीन्द्रिय जाति=दो इन्द्रिय जीव (३) त्रीन्द्रिय जाति=तीन इन्द्रिय जीव (४) चतुरिन्द्रिय-

जाति=चार इन्द्रिय जीव (५) पचेन्द्रिय जाति=पाँच इन्द्रिय जीव।

मैं समझता हूँ अभी तुम्हारी समझ में पाँच जातियों का भाव अच्छी तरह नहीं आया होगा ? तुम्हारे लिए इनका जरा और खुलासा चाहिये। 'कौन जीव किस जाति के हैं ?'—तुम्हारा यह प्रश्न भी हल होना जरूरी है। अच्छा, कोई हर्ज नहीं। लो, तुम्हें जरा और अच्छी तरह समझा दूँ।

(१) एकेन्द्रिय जाति के जीव उन्हें कहते हैं, जिनके एक स्पर्शन इन्द्रिय (शरीर) ही पाई जाय। जैसे कच्ची मिट्टी, जल, आग, हवा और पेड़-पौधे, फल-फूल आदि।

(२) द्वीन्द्रिय जाति के जीव उन्हें कहते हैं, जिनके एक स्पर्शन (शरीर) और दूसरी रसन जीभ दो इन्द्रियां पाई जायँ। जैसे—लट, शख, जौंक और केंचुआ आदि।

(३) त्रींद्रिय जाति के जीव उन्हें कहते हैं, जिनके एक स्पर्शन शरीर, दूसरी रसन जीभ और तीसरी घ्राण नाक, ये तीन इन्द्रिया पाई जायँ। जैसे—चिउटी, मकौड़ा, खटमल, जूं, और कुन्थुआ आदि।

(४) चतुरिन्द्रिय जाति के जीव उन्हें कहते हैं, जिन के एक स्पर्शन शरीर दूसरी रसन जीभ तीसरा (नाक) और चौथी चक्षु (आंख), ये चार इन्द्रियाँ पाई जायं। जैसे–मक्खी, मच्छर, ततैया, भौंरा और बिच्छू आदि

(५) पचेन्द्रिय जाति के जीव उन्हें कहते हैं, जिनके एक स्पर्शन (शरीर) दूसरी रसन (जीभ) तीसरी घ्राण (नाक) चौथी चक्षु (आँख) और पाँचवी कर्ण (कान) ये पाँच इन्द्रियाँ पाई जायं। जैसे मर्द, औरत, घोड़ा, गाय मेंढक, मछली, साँप, मोर, कुत्ता, बिल्ली, और हिरन आदि।

संसारी जीवों के स्थावर और त्रस के नाम से भी दो भेद किए हैं। जैन-धर्म में हर एक चीज का वर्णन बहुत विस्तार के साथ, कई कई तरह के भेद बता-बता कर किया गया है। ऊपर जो संसारी जीवों की पांच प्रकार की जातियाँ बताई गई हैं, संक्षेप में ये पाचों जातियाँ स्थावर और त्रस के भेद में समा जाती हैं।

इन पाँचों जातियों में से पहले नंबर के एकेन्द्रिय जाति के जीव स्थावर कहलाते हैं। पृथ्वीकाय = कच्ची मिट्टी, अप्काय = कुएँ आदि का पानी, तेजस्काय =

जलरूी आग, वायुकाय = ठण्डी हवा और वनस्पतिकाय = हरे वृक्षये सब स्थावर हैं। स्थावर जीव, अपने-आप चल-फिर नहीं सकते, इधर-उधर आ-जा नहीं सकते। इनमें चेतना-शक्ति बहुत थोड़ी होती है।

स्थावर से बिलकुल उल्टे त्रस जीव होते हैं। त्रस जीव अपने संकल्प के अनुसार चल-फिर सकते हैं, इधर उधर आ-जा सकते हैं, इनमें स्थावरों की अपेक्षा चेतना शक्ति अधिक होती है। स्थावरों में संकल्प शक्ति नहीं है, किन्तु त्रस में है। त्रस अपने भले-बुरे का विचार करता है। दो इन्द्रिय जीवों से लेकर पांच इन्द्रिय तक के जीव त्रस कहलाते हैं। लट, चिउँटी, मक्खी और पशु-पक्षी आदि सब, त्रस जीव हैं। दो इन्द्रिय जीवों से लेकर, चार इन्द्रिय जीवों को विकलेन्द्रिय भी कहते हैं।

अभ्यास

१—जाति किसे कहते हैं ?
२—संसारी जीवों की कितनी जातियाँ हैं ?
३—पाँच जातियाँ किस अपेक्षा से हैं ?
४—एकेन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?
५—द्वीन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?
६—पचेन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?
७—जल, वृक्ष, लट, चिउंटी, मच्छर, ऊँट, हाथी, चूहा, मछली, मोर, किस जाति के जीव हैं ?
८—स्थावर कौन जीव हैं ?
९—त्रस जीव कौन हैं ?
१०—स्थावर किसे कहते हैं ?
११—त्रस किसे कहते हैं ?

६

भगवान् पार्श्वनाथ

भगवान् पार्श्वनाथ का समय हठयोगी तापसों का समय था। उस समय भारत की जनता जड़ क्रिया-काण्डों में उलझ कर सत्य से भ्रष्ट हो गई थी। कुछ साधक अपने चारों ओर अग्नि जला कर तप करते थे। कुछ वृक्ष की शाखा से पैर बांध कर औंधे मुंह लटके रहते थे। कुछ कांटों पर सोते थे। कुछ सूखे पत्ते चबाकर ही जिंदगी बिता रहे थे। इसी युग में काशी के राजा अश्वसेन के यहां पौष वदी दशमी के दिन भगवान् पार्श्व-नाथ का जन्म हुआ। भगवान् की माता का नाम वामा देवी था।

एक बार काशी में गंगा के तट पर उस युग का प्रसिद्ध तपस्वी कमठ आया। वह रात दिन अपने चारों ओर अग्नि जला कर तप किया करता था। हजारों नर-नारी कमठ के दर्शनों को उमड़े पड़ते थे। अपनी पूजा देखकर साधु को मिथ्या अहंकार हो

महारानी वामा देवी भी उसके दर्शनों को गईं। राजकुमार पार्श्व भी साथ थे। राजकुमार को जनता की धर्म मूर्खता पर बहुत दुःख हुआ। पार्श्व ने अपने ज्ञान-नेत्र से देखा कि धूनी में के एक लक्कड़ में, जो अन्दर से खोखला है, साँप का एक जोड़ा जल रहा है। पार्श्व कुमार ने कहा—तपस्वी ! तुम तो धर्म की जगह अधर्म कर रहे हो। देखो, धूनीमें सांप का जोड़ा जल रहा है।

घमंडी साधु यह शिक्षा कैसे ग्रहण करता ? वह बहुत बिगड़ा और झट से उठ कर कुल्हाड़ी से जलता हुआ लक्कड़ फाड़ने लगा। सचमुच उसमें से बिलबिलाता हुआ अधजला सांप का जोड़ा बाहर निकला। साधुकी प्रतिष्ठा भंग हो गई। वह खिसियाना होकर भाग गया। दयालु राजकुमार ने सांप के जोड़े को उपदेश दिया। नवकार मंत्र सुनाया, जिसके प्रभाव से मर कर वे धरणेन्द्र और पद्मावती नामक नाग कुमार देवता हो गए।

एक बार काशी नरेश के मित्र राजा प्रसेनजित पर किसी विदेशी राजा ने चढ़ाई की। यह जान

प्रसेनजित की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी राजकुमारी प्रभावती से विवाह करना चाहता था। राजकुमारी इसके लिए तैयार न थी। बड़ा भयंकर युद्ध हुआ। शत्रु की सेना अधिक थी फलतः राजा प्रसेनजित घबरा उठे। ज्योंही यह समाचार काशी पहुँचा तो राजकुमार पार्श्व सेना लेकर पहुँचे, शत्रु राजा परास्त हो गया। प्रभावती का विवाह पार्श्व कुमार से हुआ।

राजकुमार पार्श्व का मन संसार से उदासीन रहने लगा। देश की धार्मिक आचार विचार की दुरवस्था भी उनको असह्य हो गई। फलतः अपनी लाखों की संपत्ति गरीब जनता को अर्पण कर वे मुनि बन गए। एक बार एक खुले जङ्गल में भगवान् पार्श्वनाथ जी ध्यान लगाए खड़े थे कि वह कमठ तपस्वी, जो मर कर अब मेघमाली देवता हो गया था, आ पहुँचा। मूसलाधार पानी बरसा कर, उसने भगवान् को कष्ट पहुचाया। भगवान् अपने ध्यान में तल्लीन रहे, जरा भी नहीं डिगे। अन्त में धरणेन्द्र पद्मावती ने आकर भगवान् की सेवा की। मेघमाली हार कर प्रभु के चरणों में आ गिरा, क्षमा मांगने लगा। प्रभु दयालु थे, क्षमा कर दिया।

भगवान् ने विशाल संयम साधना के बाद केवल ज्ञान प्राप्त किया और जनता के वास्तविक भगवान् हो गये। भगवान् ने जड़ क्रिया काण्ड के स्थान में विवेक-पूर्वक धर्म की साधना का उपदेश दिया। नाना प्रकार के पाखंड नष्ट कर दिये गए। भगवान् ने मगध, मालवा, कलिंग, बंगाल, बरार और कौशल आदि देशों में भ्रमण कर जैनधर्म का प्रचार किया और अन्त में बंगदेश के सम्मेद शिखर पर्वत पर निर्वाण प्राप्त किया।

भगवान पार्श्वनाथ हमारे २३ वें तीर्थंकर रहे हैं। भगवान् महावीर ने भी आपकी महिमा का वर्णन किया है और आपको पुरुषादानीय अर्थात् पुरुषोत्तम के नाम से याद किया है।

अभ्यास

१—भगवान पार्श्वनाथ का समय कैसा था ?

२—कमठ से क्या बात हुई ?

३—प्रभावती से विवाह कैसे हुआ ?

४—मेघमाली ने क्या उपसर्ग दिया ?

७

देश में ऐसी नारी हों

विश्व भर की उपकारी हों,
सत्य, शील गुण धारी हो।
धर्म मे रत अविकारी हों,
दुखी के प्रति सुखकारी हों।
सदा सन्मार्ग-विहारी हो।
देश में ऐसी नारी हों॥

प्रेम की सरिता वहती हो,
स्वार्थ की दाल न गलती हो।
राष्ट्र की दीप्ति दमकती हो,
स्वर्ग की शुद्धि वरसती हो।
जगत मे महिमा-धारी हो।
देश मे ऐसी नारी हों॥

दिखादें बिजली का सा काम,
न चाहे केवल अपना नाम !
कर्म में निरत रहें निष्काम,
शील का ध्यान रखें अभिराम !
वीर गुण गरिमा-धारी हो
देश में ऐसी नारी हो

बनावे आप भाग्य अपना,
दिखा कर बल पौरुष अपना !
न देखें झूठा कुल सपना,
कर्ममय होय सदा तृष्णा !
सत्य पर नित बलिहारी हो
देश में ऐसी नारी हो

दुखों के सह लेवें जो शूल,
न घबरावें निज पथ को भूल !
धर्म पर आप चढ़ावें फूल,
सिखादें जग को इसका मूल !
देश की, कुल की प्यारी हो
देश में ऐसी नारी हो !

चार गति

मैं समझता हूँ, तुम्हें पहले पाठ ठीक अच्छी तरह याद होंगे ! यह पाठ याद है या नहीं, जिसमें जीवों के संसारी और मुक्त दो भेद बताए गये हैं ? हाँ, तो अब गति की अपेक्षा से संसारी जीव कितने प्रकार के हैं ? यह बताना ही इस पाठ का काम है।

भगवान् महावीर ने सब संसारी जीवों को नरक-गति, तिर्यंच गति, मनुष्य गति, और देव गति—इस प्रकार चार गतियों में बाटा है। गति का अर्थ है, जीव की वह खास अवस्था, जिसे पाकर वह अच्छे-बुरे कर्मों का फल भोगता है, सुख-दुःख पाता है। जब तक उस अवस्था में भोगने योग्य बाँधे हुये कर्मों को भोग नहीं लेता, तब तक वहां से मर कर दूसरी अवस्था में नहीं जा सकता।

नरक गति

नरक गति, इस भूमि से नीचे है। कुल सात नरक हैं, जो एक दूसरे के नीचे हैं। सबसे बड़ी सातवीं नरक है।

नरकों में दुःख ही दुःख है। सुख तो नाम मात्र को भी नहीं है। नरक के जीवों को भूख, प्यास, सर्दी, गरमी, छेदन, भेदन मार-पीट आदि नाना प्रकार के दुःख भोगने पड़ते हैं। नरक में जन्म लेने वाले जीवों को नारकी कहते हैं। नारकी जीवों के शरीर आधे जले हुये मुर्दे के समान बड़े ही भद्दे और बेडौल होते हैं। उनके शरीर से बड़ी भयंकर दुर्गन्ध आती है।

नरक में कौन जाते हैं? जो प्राणी बड़े निर्दय होते हैं, शिकार करते हैं, मांस खाते हैं, शराब पीते हैं, वे नरक में जाते हैं। बुरे कर्मों का बुरा फल भोगना ही होता है।

तिर्यंचगति

पृथ्वी काय के जीव, जल काय के जीव, अग्निकाय के जीव, वायुकाय के जीव और वनस्पति काय के जीव ये सब एकेन्द्रिय जीव तिर्यंच कहलाते हैं। कीड़े, मकोड़े, मक्खी आदि तीनों विकलेन्द्रिय तथा पंचेन्द्रिय में जल-चर = मछली आदि, स्थल चर = गाय, भैंस, साप, चूहा, आदि, खेचर = तोता, हंस आदि पक्षी भी तिर्यंच कह-लाते हैं। यह तिर्यंच गति सब से बड़ी है अनन्त जीव इसी गति में हैं।

तिर्यंच गति में कौन जाते हैं ? जो प्राणी झूठ बोलते हैं, छल-कपट करते हैं, दूसरों को धोखा देते हैं, व्यापार आदि में बेईमानी करते हैं, वे तिर्यंच गति में जन्म लेते हैं। यह गति भी बुरे कर्मों का फल भोगने के लिये है।

मनुष्य गति

चारों गतियों में मनुष्य गति श्रेष्ठ है। बड़े भारी पुण्य का उदय होता है, तब कहीं जाकर मनुष्य बना जाता है। भगवान महावीर मनुष्यों को देवानुप्रिय के नाम से सम्बोधन किया करते थे। देवानुप्रिय का अर्थ है देवताओं के भी प्यारे। अर्थात् देवता भी मनुष्य बनने की कामना करते हैं। और किसी गति से मोक्ष नहीं मिलतो। मनुष्य जीवन में ही साधना के द्वारा मोक्ष प्राप्त होती है।

मनुष्य कौन हो सकते हैं ? जो प्राणी स्वभाव से सरल हो, विनयवान हो, दयालु हो, परोपकारी हो और किसी की उन्नति को देखकर डाह वगैरह न करता हो, वह मरकर मनुष्य गति में जन्म लेता है। मनुष्य होने के लिये सन्तोषी और उदार जीवन का होना आवश्यक है।

देव गति

जैन धर्म में देवताओं के चार भेद बताये हैं— भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक। वैमानिक देव सब देवताओं में श्रेष्ठ माने गये हैं। इनके ऊपर आकाश लोक में छब्बीस स्वर्ग हैं। देवगति सुख भोगने की गति है। देवता रात-दिन सुख में मग्न रहते हैं। देवता अपने शरीर को छोटा-बड़ा मन चाहा बना सकते हैं।

देवगति में कौन जन्म लेता है ? जो प्राणी साधु अथवा श्रावक धर्म का पालन करता है, दान देता है, तप करता है, दीन-दुखियों की सेवा करता है, वह मर कर देवगति में जन्म लेता है।

अभ्यास

१—गति किसे कहते हैं ?
२—गति कितनी होती हैं ?
३—नरक में कौन जाता है ?
४—मनुष्य कौन होता है ?
५—देव कौन होता है ?
६—सबसे अच्छी गति कौन सी है, और क्यों है ?

६

प्रयाण गीत

जय जैन धर्म की बोलो,
जय जैन धर्म की बोलो !

धर्म अहिंसा सबका प्यारा,
हरता है जन का दुख सारा,
प्रेम की मिसरी घोलो,
जय जैन धर्म की बोलो !

त्यागो वैर, विरोध, बुराई,
करो सभी की सदा भलाई,
मन की घुण्डी खोलो,
जय जैन धर्म की बोलो !

हावीर का नाम सुमरना,
ीवन का पथ उज्ज्वल करना,

पाप—कालिमा धोलो,
जय जैन धर्म की बोलो।

अनेकान्त की ज्योति जगाना,
पक्षपात का भाव हटाना,

'अमर' सचाई तोलो,
जय जैन धर्म की बोलो!

सूचना—यह गीत जुलूस के रूप में चलते हुए गाया जाता है।

१०

अहंकार पर विजय

हाथी ने कहा—"मैं बड़ा हूँ।"

बन्दर ने कहा—"मैं बड़ा हूँ।"

हाथी और बन्दर वन में रहते थे। दोनों में भाई-चारा था, पक्की मित्रता थी। एक दिन बड़प्पन को लेकर दोनों में झगड़ा होगया। दोनों में बड़ा कौन है? हरएक ने अपने-अपने बड़प्पन का दावा किया।

हाथी ने कहा—"पागल बन्दर, यह मेरा पहाड़ जैसा शरीर तो देख! तू मेरे आगे क्या चीज़ है? देख, मैं कितना मोटा और बलवान हूँ!"

बन्दर ने कहा—"डींग मारने से क्या फ़ायदा! आओ, सामने पहाड़ पर चढ़ें। देखें कौन चढ़ता है!"

दोनों में काफी संघर्ष रहा। परन्तु किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सके। आख़िर पंच फैसला कराने का निश्चय हुआ।

बन्दर ने कहा—"हाथी भाई, उल्लू बहुत चतुर और गम्भीर माना जाता है। चलो, उल्लू से फैसला करालें।"

हाथी और बन्दर उल्लू के पास गए।

दोनों ने अपने अपने बड़प्पन का दावा पेश किया।

उल्लू ने आखें तरेरते हुए बड़े मुह से कहा—

एक काम करो। सामने नदी के परली पार आम का पेड़ है। उसकी सबसे ऊंची टहनी पर तीन पके हुए आम लटक रहे हैं। पहिले मुझे लाकर दो, फिर तुम्हारा फैसला करूंगा।"

हाथी और बन्दर झटपट आम लाने को दौड़े।

नदी के पास आते ही बन्दरजी सिट पिटा गए। नदी पूरे जोर से उछाल खाती हुई बह रही थी। बिचारा बन्दर कैसे पार करे?

हाथी ने कहा—"डरता है? आ, मेरी पीठ पर बैठ जा। बन्दर झट उछल कर हाथी की पीठ पर बैठ गया।

हाथी मस्त झूमता हुआ नदी में घुस कर पार हो गया।

आम का पेड़ बहुत पुराना और बहुत ऊंचा था। उसकी सबसे ऊँची टहनी पर तीन पके हुए आम लटक रहे थे। आम लेने के लिए हाथी ने सूंड को बहुत ऊंचा किया, पर सूंड उस ऊंचाई तक पहुँच ही न सकी।

हाथी ने सूंड से टहनी को नीचे झुकाने की भी चेष्टा की, परन्तु इस काम में भी उसे निराशा ही मिली।

बन्दर ने कहा—"हाथी भाई, जरा खड़े रहो मैं अभी आम तोड़ कर लाए देता हूं। इसमें है क्या?

बन्दर झटपट पेड़ पर चढ़ गया। पलक मारते आम तोड़ कर नीचे उतर आया। हाथी की पीठ पर बैठ कर फिर नदी पार करली।

दोनों ने उल्लू की सेवा में तीनों आम उपस्थित कर दिए।

उल्लू ने कहा—"तुम यह आम कैसे लाए? मुझे बताओ।"

हाथी और बन्दर ने सारा हाल सच सच कह दी।

उल्लू ने कहा—बस, फैसला हो गया। तुम ही बताओ, दोनों में कौन बड़ा है? क्यों बन्दर जी, तुम अकेले नदी पार कर जाते? और क्यों हाथी जी, तुम अकेले ऊंची टहनी से आम तोड़ लाते? बस, दोनों अपने अपने काम में बड़े-बड़े हो। कोई छोटा नहीं, और कोई बड़ा नहीं। अच्छा, जाओ। फिर कभी इस तरह मत झगड़ना।"

पुत्रियो, तुम्हें बड़प्पन का अभिमान नहीं करना चाहिए। संसार में कोई बड़ा छोटा नहीं है। सब अपने अपने कामों में बड़े हैं। संसार का सब काम मिल-जुल कर ही चलता है। इसलिए तुम कभी भी अहंकार न करो सबसे मिल कर रहो। भगवान् का उपदेश है—"'जो अहंकार को जीतता है, वह सम्पूर्ण विश्व को जीतता है।'

अभ्यास

१—बन्दर और हाथी में क्या झगड़ा था?
२—उल्लू ने कैसा फैसला किया?
३—कौन बड़ा और कौन छोटा?
४—इस कहानी से क्या शिक्षा मिलती है?



रजोहरण और पूंजणी

चंपा—माता जी, यह क्या है ?

माता—मुन्नी, यह रजोहरण है । इसे ओघा भी कहते हैं ।

चंपा—माता जी, यह किस चीज का बनता है ?

माता—बेटी, यह ऊन का बनता है । देखती हो, यह नीचे ऊन को बट कर गुच्छा बनाया गया है और ऊपर काठ के डंडे से बांध रक्खा है ।



चम्पा—यह गुच्छा तो ऊनकी अलग अलग डोरियों का बना हुआ है ?

माता—हां बेटी ठीक है। ये फली या दसी कहलाती हैं।

चंपा—यह जो ऊपर डंडा है, इसे क्या कहते हैं ?

माता—यह दण्ड कहलाता है ।

चंपा—यह रजोहरण क्या काम आता है ?

माता—यह पूंजने के यानी बुहारने के काम आता है। स्थानक, उपाश्रय इसी से पूंजे जाते हैं ।

चंपा—इसमें क्यों पूंजते हैं, झाड़ू से क्यों नहीं ?

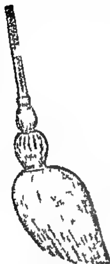
माता—झाड़ू में चींटी वगैरह जीव मर जाते हैं, इस से नहीं। देखती हो, यह नीचे से कितना कोमल है, मुलायम है ।

चंपा—यह रजोहरण तो अपने गुरु महाराज भी रखते हैं। हां, उस दिन गुरुनी जी, साधवी जी महाराज आई थीं, उनके पास भी रजोहरण था ।

माता—हां, अपने साधु और साधवी जी महाराज दोनों ही रजोहरण रखते हैं। उनको रजोहरण रखना लाजमी है। वे रात के समय इससे पूंजकर चलते हैं, ताकि अन्धेरे में पैरों के नीचे कोई जीव न मर जाय।

चंपा—उनके और हमारे रजोहरण में कुछ फर्क है, क्या ?

माता—हां, फर्क है। हमारे रजोहरण का दण्ड खुला रहता है और उनका कपड़े में लिपटा हुआ।



चंपा—यह छोटी सी ओघे जैसी क्या चीज है ?

माता—यह पूंजणी है, इसे रजोहरणी भी कहते हैं।

चंपा—यह क्या काम आती है ?

माता—यह भी पूंजने के काम आती है। सामायिक करने के लिए जब आसन बिछाया जाता है तो पहले इससे पूंज लेते हैं।

आसन या हाथ-पैर आदि पर जब कीड़ा-मकोड़ा चढ़ जाता है, तब भी इससे धीरे से पूंजकर अलग कर देते हैं, वह मरता नहीं है।

अपने गुरु महाराज भी पूंजणी रखते हैं। आसन और पातरा वगैरह इसी से पूंजते हैं।

पूंजणी के सम्बन्ध में तुम्हें एक बात खास तौर से ध्यान में रखने लायक है, वह यह है कि पुरुषों की पूंजणी तो दण्ड वाली होती है, परन्तु स्त्रियों की पूंजणी बिना दण्ड की यानी बिना डंडी की ही होती है।

अभ्यास

१—रजोहरण क्या काम आता है ?
२—पूंजणी क्या चीज है ?
३—रजोहरण और पूंजणी किस चीज के होते हैं ?
४—साधु के और गृहस्थ के रजोहरण में क्या फर्क है ?
५—पुरुषों की पूंजणी कैसी होती है ?
६—और स्त्रियों की कैसी ?

गुरुदेव

सहजो यह मन सिलगता, काम क्रोधकी आग।
भली भई गुरु न दिया, सील छिमा का बाग॥
दीपक ले गुरु ज्ञान को, जगत अंधेरे माँहि।
काम, क्रोध, मद, मोहमें, सहजो उरझी नाहि।
सहजो गुरु ऐसा मिले, जैसे धोबी होय।
दे दे साबुन ज्ञान का, मल मल डारे धोय॥
सहजो गुरु ऐसा मिले, जैसे सूरज-धूप।
सब जीवन कू चाँदना, कहा रंक कह भूप॥
ऐसे तो गुरु बहुत हैं, धृत-धृत धन लेहि।
सहजो सतगुरु जो मिले, मुक्ति धाम फल देहि॥
सहजो सतगुरु के मिले, भये और सूं और।
काग पलट गति हंस ह्वै, पाई भूली ठौर॥
सहजो गुरु दीपक दियो, देखा आतम रूप।
तिमिरि गयो चाँदन भयो, पायो परघट भूप॥

१३

अच्छे काम

आप विचार में होंगी कि—"हम अभी लड़कियां हैं, हम क्या अच्छे काम कर सकती हैं ? अच्छे काम तो वे कर सकती हैं, जो आयु म बड़ी हैं, घर की मालकिन हैं, जिनका कहना घर में और बाहर में चलता है । हम इतनी सी छोटी आयु में अच्छे काम को क्या समझें ?

आपका यह समझना बिल्कुल व्यर्थ है । आप छोटी हैं तो क्या है ? क्या छोटी आयु में अच्छे काम नहीं किए जा सकते ? भलाई करने के लिए दिल चाहिए, फिर मनुष्य कभी भी अच्छे काम कर सकता है । यदि तुम बचपन से ही सत्कर्म करने की ओर मन न लगा सकीं तो फिर बड़ी होकर भी कुछ न कर सकोगी । शुभ संस्कार बचपन में ही अपने अन्दर उत्पन्न करने चाहिएँ ।

हाँ, तो तुम क्या क्या अच्छे काम कर सकती हो ? देखो, किसी लड़की की पैंसिल खोगई हो और तुम्हारे पास फालतू हो, अथवा उस समय तुम्हें अपनी पैंसिल की जरूरत न हो, तो तुम्हें अपनी पैंसिल उपयोग के लिए उसे दे देनी चाहिए।

किसी लड़की की दावात गिर गई हो, या कोई लड़की किसी कारण अपनी दावात स्कूल में न ला सकी हो, तो अपनी दावात में उसे लिखने देना चाहिए।

किसी काम के कारण तुम्हारी कक्षा की कोई लड़की स्कूल न आ सकी हो और वह तुमसे पूछे कि कौनसा पाठ पढ़ा है और किस तरह पढ़ा है, तो तुम्हें उसको वह पाठ बता देना चाहिए।

कोई बच्चा या बूढ़ा रास्ता भूल गया हो और तुम्हें उसका घर या मुहल्ला मालूम हो तो तुम्हें उसे ठीक ठीक रास्ता बता देना चाहिए।

तुम्हारे पड़ोस में कोई अन्धा, लूला, बीमार, दुःखी मनुष्य हो अथवा वह स्त्री हो, और वह तुम्हें किसी समय कोई ऐसा काम कर देने को कहे, जिसे तुम कर

सकतो हो, तो तुम्हें वह काम कर देना चाहिए। असहाय की सेवा करना परम धर्म है।

कोई भूखों मरता कुत्ता तुम्हें दीख पड़े तो अपनी माँ से कह कर रोटी का टुकड़ा उसे डालना चाहिए। भूखा कुत्ता रोटी पाकर कितना प्रसन्न होता है, यह तुम उसे दुम हिलाते हुए देखकर जान सकती हो।

किसी गरीब लड़की के पास पुस्तक न हो, और वह पुस्तक तुम्हारे पास, अगली कक्षा में चली जाने के कारण, निकम्मी पड़ी हुई हो तो वह उसे उपयोग करने के लिए दे देनी चाहिए।

जैन धर्म, दया का धर्म है। जहाँ दया है, वहाँ जैन धर्म है। जहा दया नहीं, वहा जैन धर्म भी नहीं।

अभ्यास

१—कौनसा अच्छा काम है ?
२—कोई रास्ता भूल जाय तो तुम क्या करोगी ?
३—अन्ध, लँगड़े से कैसा बर्ताव हो ?
४—जैन धर्म कहाँ है ?

१४

माता पिता की सेवा

माता-पिता का पद, बहुत ऊँचा पद है। इस पद की तुलना किसी भी संसारी उच्च पद से नहीं की जा सकती। अपनी सन्तान पर माता पिता का बड़ा उपकार है।

विचार करो कि हमारे माता पिता यदि हमें घर से निकाल दें तो हमारा कैसा बुरा हाल हो? हमें खाना न दें तो हम क्या करें? हमारे बीमार हो जाने पर वे हमारी देख-भाल न करें तो हम कैसे जी सकें? वे यदि हमें न पढ़ाएँ तो हम बिल्कुल जंगली जैसे बन जाय? अधिक क्या, वे यदि हमें प्रत्येक बात में सहायता न करें तो हमारा कैसा बुरा हाल हो?

हमारे माता-पिता हमें खाने पीने को देते हैं, पहनने को कपड़ा देते हैं, हमारी सुख-सुविधा के लिए सब साधन जुटाते हैं गरमी सरदी झेलते हैं, दूसरों से अपमान सहते हैं, हमारे कारण उनको अनेक प्रकार की

हमारे माता पिता इतने दयालु हैं कि वे हमसे कुछ नहीं मांगते। उनका हम पर बड़ा प्रेम है। उनके उपकार का बदला हम किसी भी दशा में नहीं चुका सकते। हमें तो बस यही एक काम करना चाहिए कि सदैव उनका कहना मानें। उनकी टहल-सेवा करें। जिस तरह भी वे खुश रहें वही करना चाहिए। संसार के बड़े से बड़े महापुरुष अपने मा बाप का कहना माना करते थे। भगवान महावीर अपने माता-पिता के कैसे भक्त थे? वे गृहस्थ अवस्था में अट्ठाईस वर्ष तक माता पिता की सेवा में रहे। उन्होंने तो माता के गर्भ में ही यह प्रण कर लिया था कि 'जब तक माता पिता विद्यमान रहेंगे मैं उनको छोड़ कर मुनि-दीक्षा नहीं धारण करूंगा। मैं नहीं चाहता कि मेरे माता-पिता को मेरे किसी काम से दुःख हो।'

जो बालक और बालिकाएँ भले होते हैं, वे अवश्य माता पिता की सेवा करते हैं। अभिभावकों की आज्ञा तो पशु भी पालन करते हैं—बन्दर मदारी का कहना मानता है, गाय भैंस ग्वाले का कहना मानती हैं, और गधा भी अपने मालिक का कहना

मानता है। यदि मनुष्य हो कर भी हम अपने अभिभावक माता पिता की आज्ञा न मानें तो यह कितनी खराबी की बात होगी ? माता-पिता की आज्ञा न मानना, उनको दुखी करना, संसार में बहुत बुरा पाप माना गया है। जो बालक-बालिका अपने माता-पिता का आशीर्वाद ग्रहण करते हैं, वे सदैव आनन्द मंगल में रहते हैं। उनका यहां भी भला होता है और आगे भी भला होता है।

अभ्यास

१—माता पिता का क्या उपकार है ?

२—माता पिता की आज्ञा न मानो तो क्या हो ?

३—भगवान महावीर माता के कैसे भक्त थे ?

१५

प्रभा और आनन्दी

प्रभा की आयु सोलह वर्ष की होगी। वह एक रोनी सूरत की लड़की थी। हर बात में रोना उसका स्वभाव हो गया था। कोई बच्चा खेलने के लिए उसका हाथ पकड़ता तो वह रो देती। अपनी माँ से खाने के लिए मांगते समय रो पड़ती। किसी सम्बन्धी के घर किसी काम के लिए जाना पड़ता तो रो पड़ती। अधिक क्या, कपड़े पहनते समय, नहाते समय, बाल बनाते समय, और पाठशाला तथा व्यायामशाला जाते समय भी वह रो रो कर आफत खड़ी कर देती।

माता जी, जब उसे खाने के लिए मिठाई आदि देतीं, तब भी वह ज्यादा मांगने का आग्रह करती, और रो पड़ती। इतने में क्या होता कि, कोई दूसरा बच्चा उसे खा जाता या वह नीचे गिर कर गन्दी हो जाती। बस, वह अपने रोने का फल पाकर -

हो जाती।

बात-बात पर रोने के कारण उसके सिर के बाल बिखर जाते। कपड़े मैले हो जाते। जब देखो तब गालों पर सूखे हुए आंसू देख पड़ते। हर वक्त रोने से उसकी नाक से सिनक निकलता, मुंह से राल टपकती, सांस रुक जाती, और वह घबरा जाती। वह किसी को भाती न थी। वह गन्दी और चुड़ैल सी लगती थी। यह सारी खराबी, उसके बहुत रोने के कारण थी।

इस रोनी-सूरत लड़की की बड़ी बहन का नाम आनन्दी था। वह आठ वर्ष की होगी ? वह प्रभा से कुछ काली थी, तो भी उससे अधिक सुन्दर लगती थी। कारण, आनन्दी सचमुच आनन्दी ही थी।

खेलने में कभी उसे चोट लग जाय, कोई भी चिढ़ाने, कोई सहेली खेल म उसे थप्पड़ मार दे, उसकी माल बनाने की कघी छिपादे, या उसकी पैंसिल की नोंक तोड़ दे, तो भी वह रोती नहीं थी। वह खुशी-खुशी नहाती,। सदा अपने हाथ से कंघी करती। कोई प्रेम से बुलाता तो खुश होती। कोई कुछ पूछता तो उसे अच्छा मधुर उत्तर देती। कहीं जाना

आना पड़े तबतो बहुत खुश होती। पाठशाला भी बड़ी
प्रसन्नता से जाती। ध्यान देकर पढ़ती। इसमें अपनी
कक्षा में, वह सदा पहले नम्बर पर आती।

आनन्दी को धर्म-ध्यान भी बहुत प्यारा लगत
था। जब कभी जैन स्थानक में साधु मुनिराज य
आर्याजी आतीं, तो वह सबसे पहले दर्शनों के लि
तैयार होती। व्याख्यान में जाती, चुपचाप कायदे,
साथ एक ओर बैठती, मन लगा कर उपदेश सुनती
उसे उपदेश में बातें करना कतई पसन्द नहीं था। स
की दूसरी लड़की बात करती तो उसे भी इशारे से
रहने को कहती। वह बहुत ही समझदार हँसमुख
चतुर लड़की थी।

आनन्दी का स्वभाव आनन्दी था, इसलिए,
सब जगह आनन्द [illegible] मिलता। घर में भी वह आन
में रहती, और पाठशाला में भी। पढ़ाई में पहले न
पर रहने से, वह, दूसरी लड़कियों की मानीटर थ
अध्यापिकाजी भी उसे बहुत चाहती थीं।
उसका उदाहरण दिया करते। पड़ोसिनें
... से कहतीं कि तुम भी

आनन्दी को जहाँ सब जगह आदर और आनन्द मिलता, वहाँ रोनी सूरत प्रमा पर सब लोग हँसते और उसकी निन्दा करते। इतना ही नहीं, उसकी माँ भी उसके रोने से तंग आकर कहती कि यह राड मर जाय तो अच्छा हो। यह सब किस कारण था? प्रमा की रोनी सूरत के कारण।

प्यारी पुत्रियो, कहो–तुम्हें अब क्या अच्छा लगता है? तुम आनन्दी जैसी हसमुख होना चाहती हो, या प्रमा जैसी रोनी सूरत होना तुम्हें पसन्द है? यदि रोनी सूरत होना तुम्हें अच्छा न लगता हो, तो बिना किसी विशेष कारण के कभी मत रोओ और सदा आनन्द में रहो।

याद रक्खो —
रोना नरक है,
हँसना स्वर्ग है।
रोना मृत्यु है,
हँसना जीवन है।

अभ्यास

१–रोनी सूरत लड़की कौन होती है?
२–कौन लड़की दुखी मालूम होती है?
३–आनन्दी कैसी लड़की थी?

आत्म-दर्शन

सिद्धां जैसो जीव है, जीव सोइ सिद्ध हो
कर्म मैल का अन्तरा, बूझै१ निरला को

कर्म पुद्गल रूप है, जीव रूप है ज्ञ
दो मिलकर बहुरूप हैं, बिछड्यां२ पद निर

जो जो पुद्गल की दशा, ते निज माने है
नाही भरम विभाव ते४ बढ़ै कर्म को

रतन बंध्यो गठरी विषे, सूर्य छिपे घन५
सिंह पिंजरा में दियो, जोर चले कुछ न

१—समझे, २—अलग होने पर, ३—
४—पर परिणति यानी विकार, ५—बादल।

कर्म संग जीव मूढ़ है, पावे नाना[1] रूप।
कर्म रूप मलके टरे, चेतन सिद्ध-स्वरूप॥

शुद्ध चेतन उज्ज्वल दरव, रह्यो कर्म मल छाय।
तप संयम से धोवतां, ज्ञान ज्योति प्रगटाय॥

ज्ञान थकी[3] जाने सकल, दर्शन श्रद्धारूप।
चारित्रमे आवत[4] रुके, तप है चरण[5] स्वरूप।

कर्म रूप बादल मिटे, प्रगटे चेतन चन्द।
ज्ञान रूप गुण-चाँदनी, निर्मल ज्योति अमंद॥

गई वस्तु सोचे नहीं, आगम[6] वांछा नांहि।
वर्तमान वर्ते सदा, सो ज्ञानी जग-मांहि॥

अहो समदृष्टि जीवडा, करे कुटुम्ब प्रतिपाल॥
अन्तर्गत न्यारो रहे, ज्यूं धाय खिलावे बाल॥

१–अनेक रूप, २–द्रव्य, ३–ज्ञान से, ४–कर्म आते हुए रुकते हैं, ५– संचय होते हैं, ६–भविष्य की इच्छा।

सुख दुख दोनों वसत हैं, ज्ञानी के घट मांहि।
गिरि[1] सर[2] दीसे मुकर[3] मे भार भींजवो[5] नांहि॥

जो जो पुद्गल फरसना[4] निश्चिय फरसे सोय।
ममता समता भाव से, कर्म वन्ध क्षय होय॥

कल्प वृक्ष, चिन्तामणि, इस भव मे सुखकार।
ज्ञान वृद्धि इनसे अधिक, भव दुख भंजनहार॥

शील रतन मोटा रतन, सब रतनो की खान।
तीन लोक की सम्पदा, रही शील में आन॥

१–पहाड़, २–तालाब, ३–दर्पण, ४–भागना, ५–भागना।

१७

चन्दनबाला

भगवान् महावीर दीक्षा ग्रहण कर चुके थे, और शून्य वनों में रह कर साधना कर रहे थे। प्रायः जंगल ही में रहते थे, केवल तपस्या पारणा के लिए ही कभी कभार नगरी में आते थे। एक बार भगवान् ने बड़ा लम्बा तपश्चरण किया। तप करते-करते पांच मास और ऊपर पच्चीस दिन हो गए थे।

उन्हीं दिनों भारतवर्ष की चम्पा नगरी में बड़ी भयंकर घटना हुई। चम्पा नगरी के राजा दधिवाहन और कौशाम्बी के राजा शतानीक में युद्ध छिड़ गया। शतानीक की विशाल सेना का आक्रमण दधिवाहन झेल न सका, पराजित होकर भाग खड़ा हुआ। दधिवाहन की रानी धारिणी और पुत्री चन्दनबाला

भी वन में भागी जा रही थी कि शतानीक के एक
सैनिक ने उनको गिरफ्तार कर लिया।

सैनिक धारिणी और चन्दनबाला को रथ में बिठा
कर जब कौशाम्बी लेजा रहा था, तब वह मार्ग में धारिणी
रानी के रूप को देखकर मोहित हो गया और कहने
लगा–"तुम मेरे साथ रहना। मैं तुझे अपनी स्त्री बना
कर रखूंगा, तुझे किसी प्रकार की तकलीफ नहीं होगी।"

धारिणी ने यह सुना तो घबरा उठी। रानी ने
देखा कि कामान्ध सैनिक छेड़ छाड़ करने पर उतारू है।
अस्तु रानी ने अपने सतीत्व की रक्षा के लिए जीभ काट
कर आत्महत्या करली। सैनिक ने रानी के मृत शरीर
को वहीं जंगल में डाल दिया और चन्दनबाला को
समझा-बुझाकर कौशाम्बी ले आया।

चन्दनबाला भी अपने सतीत्व पर बहुत दृढ़ थी।
दुष्ट सैनिक जब इस ओर से निराश हो गया तो
बाजार में उसे बेचने ले गया। उस युग में पशुओं के
समान स्त्री और पुरुष भी बाजार में बेचे जाते थे। इस
नीच प्रथा का भगवान् महावीर ने केवल ज्ञान पाने के
बाद बड़ा जबर्दस्त विरोध किया था।

हां तो जब वह सैनिक चन्दनबाला को बाजार में बेच रहा था, तब कौशाम्बी के नगर सेठ धनावाह जी उधर आ निकले। उन्होंने एक भले घर की सुशील लड़की को बिकते देखा तो व्याकुल हो गए। सैनिक को मुंह मांगी कीमत देकर चन्दनबाला को अपने घर ले आए। देखिए, प्राचीन काल में जैन लोग किस प्रकार दीन दुःखी अबलाओं की सहायता किया करते थे।

सेठ की स्त्री का नाम मूला था। वह बड़ी निर्दय स्वभाव की थी। चन्दनबाला के रूप को देख कर हैरान हो गई। उसने सोचा कि 'हो न हो, सेठ अपनी स्त्री बनाने के लिए ही इसे लाया है। मनुष्य का मन चपल है। जरूर कुछ दाल में काला है।'

एक समय की बात है कि सेठ जी तीन चार दिन के लिए गांव गए हुए थे। पीछे से मूला ने चन्दन बाला के पैरों में बेड़ी डाल कर उसे तल घर में बन्द कर दिया, और खुद अपने पीहर चली गई। चन्दनबाला तीन दिन तक भूखी प्यासी तलघर में बन्द रही। वह [illegible] दुख में भी भगवान् का ध्यान करती

रही। मूला पर कुछ भी रोष न किया। 'यह सब मेरे पिछले कर्मों का फल है'—यही विचारती रही।

चौथे दिन सेठ जी गाव से लौटे। चन्दनबाला की यह दशा देख कर उनको बड़ा ही दुःख हुआ। सेठजी ने बड़े प्रेम से उसे तहखाने से बाहर निकाला। वह तहखाने की चौखट पर आकर बैठ गई। तीन दिन तक तप रहा था, अतः भूख से व्याकुल थी। सेठजी ने इधर-उधर बहुत कुछ देखा, जब कुछ भी खाने को न मिला तो राधे हुए उड़द के बाकले ही लोहे के थाल में डाल कर दे दिए और खुद बेड़ी तुड़वाने के लिए लुहार को बुलाने चल गए।

चन्दनबाला उड़द के गरम बाकलों को ठंडा कर रही थी और भावना भर रही थी 'आज मेरे तेले का पारणा है। अतः किसी पवित्र अतिथि को भोजन देकर ही पारणा करूं तो कितना अच्छा हो!' वह यह विचार कर ही रही थी कि—इतने में भगवान् महावीर स्वामी पधारे। चन्दनबाला के हर्ष का पार न रहा। बड़ी श्रद्धा भक्ति के साथ भगवान् को उड़द के बाकले ही अर्पण

किए। दान के प्रभाव से पैरों में पड़ी लोहे की बेड़ियां सोने के गहने बन गए आकाश से देवताओं ने फूलों की वर्षा की। कौशाम्बी नगरी में घर-घर चन्दनबाला के गुण गाए जाने लगे। मूला ने भी आकर क्षमा मांगी। आखिर प्रेम ने घृणा और द्वेष पर विजय प्राप्त की।

भगवान् महावीर को जब केवल ज्ञान हुआ तो चन्दना ने प्रभु के पास दीक्षा ग्रहण करली। वह छत्तीस हजार आर्याओं में सबसे बड़ी अधिनेत्री बनी। लम्बी साधना के बाद चन्दना को केवल ज्ञान प्राप्त हुआ और वह अजर-अमर मोक्ष में जाकर अजर अमर हो गई।

अभ्यास

१—चन्दना कौशाम्बी कैसे आई ?
२—भगवान महावीर को क्या बहराया ?
३—इस कथा से क्या शिक्षा मिलती है ?

१८

भोजन, वस्त्र व गहना

देखो, अब तुम बहुत सयानी हो गई हो। वह पहले जैसा बचपन अब कहाँ? इसलिए पहले की तरह ज़रा-ज़रा सी बात के लिए रोना, चिल्लाना, और मचलना-अब तुम्हें शोभा नहीं देता।

अब तुम्हें अपने आपको संभाल कर रखना चाहिए। तुम्हारा हर एक काम बड़ी चतुरता और समझदारी के साथ होगा, तो तुम सभ्य कहलाओगी। घर और बाहर वाले सब तुम्हारा आदर करेंगे। तुम भारत माता का गौरव बढ़ाओगी। तुम भगवान् महावीर की लाड़ली बेटियां हो, देखना, किसी तरह की गड़बड़ न करना। भोजन, वस्त्र और गहना--ये तीन चीजें तुम्हें हमेशा अच्छी लगती हैं। परन्तु इन पर ज़रा गहरा विचार करो और खूब अच्छी तरह समझ बूझकर निर्णय करो।

यदि तुमने इन तीन चीजों पर अच्छी तरह विचार कर लिया और तदनुसार ही चलना निश्चित कर लिया, तो रस सोने में सुगन्ध पैदा कर देगी।

' भोजन सीधा-सादा सात्त्विक होना चाहिए। अधिक मिर्च-मसाला, खट्टा मीठा, चपरा खाना ठीक नहीं होता। जो भोजन अच्छी तरह पच न सके, वह भोजन ही क्या? भोजन का सम्बन्ध स्वाद से नहीं है। भोजन तो भूख बुझाने, शरीर को सबल बनाने तथा फुर्तीला रखने के लिए है। भोजन कैसा ही रूखा सूखा हो, खूब प्रसन्नचित्त होकर खाना चाहिए। भोजन करने से पहले तीन बार नमस्कार मंत्र का सुमरण अवश्य करना चाहिए। कड़ी भूख लगने पर नियत समय पर ही खाना ठीक है। बिना भूख के खाना ज़हर हो जाता है। चलते समय अथवा लेटे-लेटे भोजन करना मूर्खों का काम है। दूसरे के पास खाने की कैसी ही अच्छी चीज क्यों न हो, भूल कर भी मत मांगो। मांगना, भिखारियों का काम है। तुम्हें अपने मन और जीभ पर काबू रखना चाहिए।

जानती हो, वस्त्र क्यों पहने जाते हैं ? वस्त्र लज्जा की रक्षा के लिए हैं, और सर्दी गरमी से बचने के लिए। अपने धन और बड़प्पन की शान दिखाने के लिए बढ़िया कीमती वस्त्र पहनना, पाप है। रेशम के वस्त्र पहनना तो बड़ा ही भयंकर पाप है। रेशम अनगिनत कीड़ों को मार कर बनाया जाता है। यह खूनी वस्त्र है। भगवान् महावीर की भक्त होकर, जो लड़की रेशमी वस्त्र पहनती है, वह भगवान् के नाम को लजाती है। जानती हो, जैन धर्म अहिंसा धर्म है। इसलिए बहुत महीन, चमकदार, रेशम आदि के वस्त्र मत पहनो, खादी बहुत स्वच्छ और सादा वस्त्र है, इससे गरीब जुलाहों का पालन होता है। अस्तु खादी से बढ़ कर दूसरा कोई वस्त्र ही नहीं है। किसी के अच्छे वस्त्र देख कर ललचाई हुई आंखों से मत देखो। मनुष्य की इज्जत गुणों से है, वस्त्रों से नहीं। आर गांधी जी कौन से बढ़िया रेशमी और मखमल आदि के वस्त्र पहनते थे ? सारी दुनिया उनके गुणों पर ही तो मुग्ध है।

आज कल गहना पहनना भी एक फैशन हो गया है। जो लड़की जितने अधिक गहने पहनती है, वह

अपने को उतनी ही अमीर समझती है, परन्तु यह उसकी सबसे बड़ी भूल है। गहने पहनने से कोई बड़ा नहीं हो जाता। सीता और द्रौपदी को जानती हो? वे कितने गहने पहनती थीं? आज संसार में उनकी पूजा गहनों के कारण नहीं है, गुणों के कारण है। इसलिए तुम कभी भी गहना पहनने की जिद न करो। कभी कभी गहना, बच्चों के प्राण का गहना हो जाता है। भारत-वर्ष में सैकड़ों बच्चे गहनों के कारण ही उड़ाए जाते हैं, और मारे जाते हैं। तुम्हारी सुन्दरता पढ़ने, लिखने, होशियार होने तथा हमेशा स्वच्छ रहने में है। तुम चाँद हो, चाँद बिना गहने के ही कैसा सुन्दर चमकता है?

अभ्यास

१—भोजन कैसा होना चाहिए?
२—भोजन करने से पहले क्या करना चाहिए?
३—भोजन का क्या उद्देश्य है?
४—वस्त्र कौनसा अच्छा है?
५—रेशमी वस्त्र क्यों नहीं पहनना चाहिए?
६—गहनों से क्या हानि है?
७—तुम्हारी सुन्दरता किस बात में है?

१६

एक उदार जैन महिला

यह कहानी, खाली कहानी नहीं है। आठ सौ वर्ष पूर्व का सच्चा इतिहास है। जब तक यह इतिहास जीवित रहेगा, सुरक्षित रहेगा, तब तक जैन समाज के गौरव को अजर अमर बनाये रक्खेगा। सारा संसार एक मुख से कहेगा—यदि कोई आदर्श नारी हो, तो ऐसी हो।

हां, तो कर्णावती नगरी के समीप एक जैन-धर्म-स्थानक में कोई परदेशी आदमी उदास मुंह लिए बैठा था। वह गरीब था, आश्रय की खोज में था। वह धर्म से जैन धर्म का पालन करने वाला था।

सौभाग्य से उसी समय वहां एक जैन महिला लक्ष्मी बहन, जिसे वहां की लोकभाषा में लाछी बाई कहते थे, धर्म-ध्यान करने आ गई। धर्म-ध्यान करके

लक्ष्मी ज्यों ही घर लौटने को हुई, उसकी नजर उपयुक्त परदेशी पर पड़ी। उसने बड़े प्रेम के साथ धीमे से पूछा—'भाई, कहीं बाहर से आए हो क्या ?'

'हां, बहन ! मारवाड़ से आया हूँ।'

'अकेले हो ?'

'नहीं, साथ में मेरे बालबच्चे भी हैं।'

'यहाँ किस लिए आए हो ?'

'कहीं कोई काम-धंधा मिल जाय तो करूं, इस विचार से यहां तक आया हूँ।'

'अच्छा, ऐसी बात है ?'

परदेशी की बात सुनकर लक्ष्मी तनिक विचार में पड़ गई, और फिर बोली—

'तुम्हारा नाम क्या है भाई ?'

'ऊदा'

'कहाँ ठहरे हो ?'

'ठहरता कहाँ ? परदेशी आदमी ठहरा। मेरी समझ में नहीं आता कि कहाँ जाऊं ?'

'चिन्ता न करो भाई ! मेरे साथ चलो तुम्हारा घर है, ठहरने की क्या फिकर ? मैं कोई अमीरजादी तो नहीं, पर मुझसे जो बनेगा, सो रूखी सूखी तुम्हें भी जरूर दूंगी।'

ऊदा इस उदार और भली बहन की बातों को बड़े अचरज के साथ सुनता रहा। जिस देश के लोग एक परदेशी के लिए इतनी ममता दिखाते हैं, उस देश के लिए उसके मन में आदर पैदा होने लगा। उसने अपने भाग्य की सराहा कि जो उसे खींच कर गुजरात तक ले आया।

लक्ष्मी ने ऊदा और उस के बाल बच्चों को भोजन कराया। और फिर अपना एक खाली मकान उसे रहने के लिए दे दिया। वहां रह कर ऊदा ने धीरे-धीरे अपनी मेहनत और होशियारी से कुछ धन संग्रह कर लिया। कुछ वर्षों बाद लक्ष्मी के जिस घर में वह रहता था उसे गिरा कर उसकी जगह ईंटों का पक्का घर बनाने का विचार किया।

लक्ष्मी से पूछा तो उसने कहा—'यह घर मैंने तुम्हें दे दिया। अब यह घर तुम्हारा है, जैसा चाहो, बना लो।'

आखिर पुराना घर गिराया गया, और उसकी नींव खोदी जाने लगी। उस नींव में से सोने की मुद्राएं

से भरा एक गढ़ा हुआ पड़ा निकला। अब यह प्रश्न उठा कि इस धन का मालिक कौन हो ?

ऊदा ने सोचा—'घर लक्ष्मी का था। उसे क्या मालूम न होगा कि नींव में धन गड़ा है ? जान पड़ता है, उसे कुछ मालूम नहीं है। अगर मालूम होता तो वह जरूर इसे निकलवा लेती। परन्तु कुछ भी हो, उसे मालूम हो, या न हो, इसकी मालिक तो वही है। इस लिए मुझे तो यह धन उसी को दे देना चाहिए।'

यह सोच कर नींव में से मिले हुए सारे धन के साथ ऊदा लक्ष्मी के पास पहुँचा। लक्ष्मी, लक्ष्मी ही थी। उसने लेने से साफ इन्कार किया और कहा कि—

'भाई, क्या पागल हो गये हो ? घर मेरा कहा है, वह तो मैं तुम्हें दे चुकी थी। अब इस धन से मुझे क्या वास्ता ? क्या मुझे पाप में डुबोना चाहते हो ?

बहुत आग्रह किया गया, परन्तु लक्ष्मी टस से मस न हुई। उसने उस धन को छुआ तक नहीं, सब का सब ऊदा को ही लेना पड़ा। अब क्या था, उस धन के बल पर गरीब ऊदा, ऊदा न रहकर सेठ उदयन बन गया

लक्ष्मी! तुझे धन्य है। तूने कितना बड़ा उदार हृदय पाया था! साधारण स्त्री होकर भी तूने लोभ न किया। एक विदेशी को केवल अपने धर्म प्रेम के नाते अपना घर दिया, और घर में से निकलने वाली सब सम्पत्ति भी अर्पण कर दी। जैन इतिहास की यह अमर कहानी, विश्व को उदारता का पाठ पढ़ाने के लिए युग युग तक पर्याप्त रहेगी।

अभ्यास

१—यह कहानी कितनी प्राचीन है?

२—लक्ष्मी ने कौनसा बड़ा काम किया?

३—सारी कहानी अपनी जबानी सुनाओ।

२०

नव तत्त्व

जैन धर्म संसार में कुल नौ तत्त्व मानता है। इनमें दो तत्त्व, जो प्रारम्भ के हैं, मूल तत्त्व हैं। बाकी के सात तत्त्व, उन दोनों तत्त्वों के मिलने-बिछुड़ने के ही रूप हैं। अन्तिम मोक्ष तत्त्व आत्मा का अपना शुद्ध रूप है।

१ जीव तत्त्व—जीव आत्मा को कहते हैं। ये आत्माएं अनन्त हैं। जब तक आत्मा कर्मों से बंधा है, तब तक नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देव-गति में घूमता रहता है। और जब वह कर्म से अलग होकर शुद्ध हो जाता है तो भगवान् बन जाता है, मोक्ष पा लेता है।

२ अजीव तत्त्व—जो जीव न हो, जड़ हो, उसे अजीव कहते हैं। अजीव के दो भेद हैं-रूपी और अरूपी। जिसमें रूप, रस, गन्ध और स्पर्श हो, उसे रूपी कहते हैं, जैसे पृथ्वी, जल, अग्नि आदि के पर-

माणु आदि। अरूपी उसे कहते हैं, जिसमें उपर्युक्त रूप, रस आदि न हों; जैसे, आकाश, काल आदि। आत्मा पर लगने वाले कर्म भी रूपी अजीव हैं।

(३) पाप तत्त्व—हिंसा, असत्य, चोरी, व्यभिचार और काम, क्रोध, लोभ आदि पाप हैं। इनके करने से आत्मा नरक आदि गतियों में दुःख पाता है।

४ पुण्य तत्त्व—भूखों को भोजन देना, प्यासों को पानी पिलाना, धर्मशाला बनाना, गरीबों को वस्त्र देना आदि पुण्य है। पुण्य करने से आत्मा को मनुष्य और देव गति में सुख मिलता है।

५ आस्रव तत्त्व—जिस प्रकार तालाब में नाली के द्वारा पानी आता है तो उसे आस्रव कहते हैं, उसी प्रकार जिन कारणों से आत्मा में कर्म आता है, उन कारणों को भी जैन-धर्म में आस्रव कहते हैं। पाँच इन्द्रियों के भोग-विलास में लगे रहना, हिंसा, असत्य आदि का आचरण करना, तथा मन, वचन और शरीर को वश में न रखना, इत्यादि आस्रव कहल—

६ संवर तत्त्व—आत्मा में [illegible]

वाले कारणों को रोक देना सवर है। पांच इन्द्रियों को वश में रखना, अहिंसा सत्य आदि का आचरण करना, मन, वचन और शरीर को सयम में रखना, इत्यादि सवर हैं।

(७) निर्जरा तत्त्व-आत्मा पर लगे हुए कर्मों को एक एक करके नष्ट करना, निर्जरा है। उपवास = व्रत करना, दूसरों की सेवा करना, बड़ों का आदर-भाव रखना, ज्ञान की उपासना करना, इत्यादि साधनाओं से कर्म की निर्जरा होती है।

(८) बन्ध तत्त्व— आत्मा पर लगे हुए कर्मों को बन्ध कहते हैं। ये कर्म ज्ञानावरण आदि आठ प्रकार के होते हैं। इन्हीं के कारण आत्मा ससार चक्र में भटकता है।

(९) मोक्ष तत्त्व--सब कर्मों को नष्ट कर के जब आत्मा जन्म मरण के चक्र से सदा के लिए छूट जाता है, तब मोक्ष होती है। मोक्ष दशा में न शरीर रहता है, और न शरीर के काम आने वाले ससारी सुख-दुःख के भोग ही रहते हैं। उस समय आत्मा परमात्मा बन

जाता है। निर्जरा में कर्मों का नाश अधूरा रहता है, जब कि मोक्ष में कर्मों का पूर्णतया नाश हो जाता है, यही इन दोनों में भेद है।

मोक्ष पाने के लिए तीन रत्न की उपासना बहुत आवश्यक है। सम्यग् दर्शन = वीतराग भगवान की वाणी पर सच्चा विश्वास, सम्यग् ज्ञान = जीव अजीव आदि तत्वों का सच्चा ज्ञान, सम्यक् चारित्र = अहिंसा, सत्य आदि का सच्चा आचरण—जैन धर्म में ये तीन रत्न माने गए हैं। जब उक्त तीनों रत्नों की साधना पूर्णदशा पर पहुँचती है, तब आत्मा को मोक्ष प्राप्त होता है, पहले नहीं।

अभ्यास

१—पाप और पुण्य का स्वरूप बताओ ?
२—आस्रव और संवर किसे कहते हैं ?
३—निर्जरा और मोक्ष में क्या अन्तर है ?
४—तीन रत्न कौन से हैं ?

२१

भारतवर्ष

(१)

शिल्प शास्त्र कृषिकर्म कला
कौशल का जो है जन्म स्थान,
जगका जटता-तिमिर हटाकर
चमका है जो सूर्य समान!
मानव जीवन का पृथ्वी पर
जिसने चित्र उतारा है,
सब देशों में सभ्य शिरोमणि,
भारतवर्ष हमारा है!

(२)

दुःखी देखकर अज्ञ विश्व को
जिसने ज्ञान-निधान किया,
महा असभ्यों को भी जिसने
शिक्षित सभ्य समान किया!

मुक्ति-रत्न का देने वाला
जिसने धर्म प्रचारा है,
सब देशों का उपदेशक वह,
भारत वर्ष हमारा है ॥

(३)

शस्य श्यामला धरा सदा थी
षट् ऋतुओं के साथ जहां
पारस तरु बंटते रहते थे
नरनाथों के हाथ जहां
सुरपति ने भी जिसके आगे
आकर हाथ पसारा है,
सब देशों का मौलि-मुकुट वह,
भारत वर्ष हमारा है ॥

२२

महासती राजीमती

जूनागढ़ के राजा उग्रसेन थे, जिनकी पुत्री का नाम राजीमती था। राजीमती को राजुल भी कहते हैं। यह बहुत सुन्दर और चतुर राजकुमारी थी। उनका विवाह द्वारिका के यादव वंशी राजकुमार श्री नेमिकुमारजी के साथ होना निश्चित हुआ था। श्री नेमिकुमार, राजा समुद्रविजयजी के पुत्र थे। आपकी माता का नाम शिवादेवी था। आप श्रीकृष्ण वासुदेव के, चाचा के लड़के, भाई थे।

श्री नेमिकुमार रथ में बैठकर बारात के साथ उग्रसेन के द्वार पर तोरण के लिए जा रहे थे। जब रथ राजमहल के पास पहुँचा तो उन्होंने बाड़े में करुण स्वर से चिल्लाते हुए दीन पशुओं को देखा। उन्हें देख कर उनको बड़ी दया उत्पन्न हुई।

श्री नेमिकुमार ने सारथी से पूछा—"यह पशुओं का समूह, एक जगह किस लिए इकट्ठा किया गया है ?" सारथी ने कहा—"आपके विवाह महोत्सव पर मारने के लिए इन पशुओं को इकट्ठा किया गया है। आखिर यह बारात है। इसमें बहुत से अतिथि मांसाहारी भी तो आए हुए हैं।"

सारथी की बात सुन कर श्री नेमिकुमारजी हैरान हो गए। उनके कोमल मन में दया का सागर बह गया। वे विचारने लगे कि—"ये पशु वन में रहते हैं, घास खाते हैं और किसी का अपराध नहीं करते। इन दीन पशुओं को मेरे विवाह के लिए मारा जाता है ? कितना भयंकर अनर्थ है ?"

इस प्रकार विचार करने पर उनको वैराग्य हो गया। उन्होंने आज्ञा देकर सब पशु छुड़वा दिए और आभूषण वगैरह उतार कर सारथी को दे दिए। श्रीकृष्णचन्द्र आदि ने बहुत समझाया, परन्तु श्री नेमिकुमारजी न माने और दीक्षा धारण कर, साधना करने के लिए गिरनार पर्वत पर चले गये, वहाँ उन्हें केवल ज्ञान हुआ।

अब जरा राजुल की बात भी मालूम कीजिए। जब श्री नेमिनाथजी की बारात आ रही थी तो राजीमती विवाह की खुशी में अपने महल के झरोखे पर बैठी हुई बारात का आगमन देख रही थी। ज्यों ही उसने श्री नेमिकुमारजी के रथ को वापस लौटते हुए देखा और वास्तविक सत्य मालूम हुआ तो एक दम बेहोश हो गई। जब होश में आई तो जोर-जोर से रोने लगी।

राजा उग्रसेन ने और राजुल की माता ने बहुत समझाया कि —"यदि श्री नेमिकुमार जी वैरागी हो गए हैं तो क्या हुआ? अभी उनके साथ तेरा विवाह तो हुआ ही नहीं है। किसी दूसरे सुन्दर राजकुमार के साथ तेरा विवाह कर दिया जायगा।'

माता-पिता की इन बातों से उसे बड़ा दुःख हुआ। उसने कहा—"मेरे पति तो श्री नेमिकुमार ही हैं। उनके सिवाय सब मेरे पिता, पुत्र और भाई के समान हैं। मुझे अब विवाह करना ही नहीं है। मैं तो श्री नेमिनाथ भगवान् के पथ में दीक्षा धारण कर साध्वी बनूं गी।"

भगवान नेमिनाथ जी के दर्शन करने के लिए राजुल गिरनार पर्वत पर जा रही थी। मार्ग में पड़े

ज़ोर से वर्षा होने लगी। राजुल वर्षा से बचने के लिए भीगती हुई, पास की ही एक गुफा में पहुंच गई। वहाँ श्री नेमिनाथजी के भाई रथनेमि मुनि ध्यान लगा कर खड़े हुए थे। राजुल के रूप को देख कर वे मोहित हो गए और वापस घर चलकर विवाह कर लेने के लिए कहा।

राजमती ने बड़े गंभीर विचारों के द्वारा रथनेमि को समझाया और कहा—"यह तुम क्या कर रहे हो? संसार के भोग विलासों को त्याग कर मुनि बने हो और फिर उन्हीं वमन किए हुए भोगों को ग्रहण करना चाहते हो? इस पतित जीवन से तो मर जाना अच्छा है। मुझसे इस बात की भूलकर भी आशा न रक्खो। तुम तो क्या हो, स्वयं इन्द्र भी आकर प्रार्थना करे तो मैं घृणा पूर्वक ठुकरा दूँगी।

राजीमती के प्रवचन का रथनेमि पर बड़ा प्रभाव पड़ा। वह अपनी दुर्बलता पर पछताने लगा। वह जिस संयम मार्ग से भ्रष्ट हो रहा था, पुनः उस पर दृढ़ता के साथ आरूढ़ हो गया। राजीमती को धन्य है कि खुद भी दृढ़ रही और डिगते हुए रथनेमि को भी धर्म में स्थिर कर दिया।

राजीमती भगवान् नेमिनाथजी के चरणों में दीक्षा धारण कर साध्वी बन गई। उसने बहुत बड़ी कठोर तप. साधना की। संयम की साधना ज्यों ही उच्च दशा पर पहुँची, त्यों ही राजीमती को केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। और वह सदा काल के लिए जन्म-मरण को नष्ट कर मोक्ष में विराजमान हो गई।

अभ्यास

१—राजीमती किसकी पुत्री थी ?
२—राजीमती का विवाह क्यों न हुआ ?
३—रथनेमि के साथ क्या बात हुई ?
४—राजीमती के जीवन से क्या शिक्षा मिलती है ?

२३

भगवान् का भजन

शरीर को स्वस्थ रखने के लिए जैसे प्रतिदिन खाना, काम करना, भ्रमण करना आदि आवश्यक है, वैसे ही मन को पवित्र तथा निर्मल रखने के लिए नित्य प्रति भगवान् का भजन करना भी अतीव आवश्यक है।

भगवान् का भजन करने से मन साफ होता है, मन साफ होने से उसमें अच्छे विचार पैदा होते हैं, अच्छे विचार पैदा होने से अच्छे काम होते हैं, अच्छे काम होने से संसार के अन्दर इज्जत मिलती है और साथ ही धर्म का लाभ होता है। भगवान् का भजन हमारी आत्मा को शुद्ध बनाता है।

यह एक अटल नियम है कि जो आदमी जैसा ध्यान करता है, वह वैसा ही बन जाता है। चोर का

ध्यान करने से मनुष्य-चोर बन जाता है और साहूकार का ध्यान करने से साहूकार। पापी का ध्यान आदमी को पापी बनाता है और धर्मात्मा का ध्यान धर्मात्मा। भगवान् का ध्यान भक्त को भगवान् बनाता है। मनुष्य के मन पर सकल्प का बड़ा प्रभाव पड़ता है।

ससार में जितने भी छोटे बड़े सभ्य मनुष्य हैं, सब भगवान् का नित्य भजन करते हैं। छोटे से छोटे और बड़े से बड़े प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वह प्रातः काल उठकर सब से पहले भगवान् का स्मरण कर, बाद में और कुछ करे।

जैन धर्म में सच्चे देव का बहुत महत्त्व है। वीतराग देव ही हमारे भगवान् हैं। वीतराग की उपासना साधक को वीतराग बनाती है। वीतराग का अर्थ है—'राग और द्वेष से रहित होना।' जैन धर्म का नवकार मन्त्र, वीतराग भगवान् का भजन करने के लिए सब से अच्छा मन्त्र है। इसलिए प्रातःकाल उठकर नवकार मन्त्र का जप करना चाहिए एक सौ आठ बार, अथवा कम से कम सत्ताईस बार। नवकार मन्त्र के जप के बाद कोई

सरल-सा स्तोत्र बड़े मधुर कण्ठ से पढ़ना चाहिए, जिससे तुम्हें भी आनन्द मिले और सुनने वालों को भी।

प्यारी पुत्रियो, भगवान् का भजन करना कभी भी मत भूलो। जब तक भगवान् का भजन न करलो, तब तक कुछ न खाओ। बाहर के खाने की अपेक्षा यह अपनी आत्मा के लिए अंदर की खुराक बहुत जरूरी है।

अभ्यास

१—भगवान् के भजन से क्या लाभ है ?
२—ध्यान के सम्बन्ध में तुम क्या समझती हो ?
३—जैन धर्म में सच्चे देव कौन होते हैं ?
४—वीतराग का क्या अर्थ है ?

२४
दुर्गावती

जिस समय सम्राट अकबर दिल्ली के सिंहासन पर विराजमान था, नर्मदा नदी के तट पर जबलपुर के पास एक छोटी सी रियासत गढ़ मण्डल के नाम से प्रसिद्ध थी। वहाँ के राजा संग्रामसिंह थे। उनकी रानी का नाम दुर्गावती था।

दुर्गावती चन्देल के राजा की लड़की थी। वह जैसी रूपवती थी, वैसी ही वीर थी। बालकपन से ही उसने धनुष-बाण तथा तलवार चलाना भली भाँति सीख लिया था।

दुर्गावती के पुत्र का नाम वीर वल्लभ था। अभी वह चौदह वर्ष का ही था कि उसके पिता राजा संग्राम सिंह का देहान्त हो गया। प्रजा ने वीर वल्लभ को गद्दी पर बैठाया, परन्तु वह राज्य के काम को अच्छी प्रकार न समझता था। इसलिए सारा काम [illegible]
[illegible]को ही करना पड़ता था।

अकबर छोटी-बड़ी अनेकों हिन्दू रियासतों को जीत कर अपने राज्य को बढ़ा रहा था। गढ़ मण्डल की स्वतन्त्र रियासत उसकी दृष्टि से कैसे बच सकती थी। उसने अवसर पाकर मुगल सेना को सन् १ ६४ ई में गढ़ मंडल जीतने के लिए भेज दिया। आसफ खाँ सेनापति नियत किया गया।

गढ़ मंडल की प्रजा अकबर की चढ़ाई का समाचार पाकर बहुत घबराई, परन्तु दुर्गावती ने बड़े उत्साह से मुकाबले की तैयारी की। उसने ८००० सवार, १५०० हाथी और बहुत सी पैदल सेना इकट्ठी की। और लड़ाई के मैदान में आ डटी। रानी ने अपने शरीर पर बख्तर पहन रखा था। उसके एक हाथ में तलवार थी और दूसरे में धनुष। वह हाथी पर सवार थी।

दोनों ओर से तीरों की वर्षा होने लगी। तलवारों की बिजलियाँ चमकने लगीं। दुर्गावती और उसके पुत्र ने ऐसी वीरता से युद्ध किया कि दुश्मनों के छक्के छूट गए। उन्होंने सैकड़ों शत्रुओं को मार गिराया। रानी इधर दोनों हाथों से तलवार चलाती थी, उधर उत्साह भरे वचन कह कर सेना का दिल बढ़ाती थी। वीर

राजपूतों ने शेर की तरह बढ़-बढ़ कर शत्रुओं पर आक्रमण किए। आसफखां ने अनेक बार बड़ी लड़ाइयाँ जीती थीं, परन्तु आज उसे भी नीचा देखना पड़ा। मुगल सेना घबरा उठी परन्तु इतने में रात हो गई, फलतः अंधेरा छा जाने से युद्ध बन्द कर दिया गया।

राजपूत वीरों ने अगले दिन प्रातःकाल बड़ी वीरता से युद्ध करने का निश्चय किया, परन्तु धूर्त आसफ खाँ ने रात ही में राजपूतों पर धावा बोल दिया। रात में युद्ध न करने का नियम भंग कर दिया गया। दुर्गावती अपनी सेना को लिए-एक तग घाटी में खड़ी हो गई। उसका वीर पुत्र तलवार हाथ में लिए शेर की तरह गज-गर्ज कर राजपूतों का उत्साह बढ़ाने लगा। परन्तु शत्रुओं की शक्ति अचानक आक्रमण करने के कारण बड़ी प्रबल हो रही थी। वीरवल्लभ बहुत बुरी तरह घायल हुआ।

अब दुर्गावती दोनों हाथों में तलवार खींचे घोड़े पर सवार आगे आई और बड़ी वीरता से युद्ध किया। वह मुह में घोड़े की लगाम पकड़े हुए थी और दोनों हाथों से तलवार चला रही थी। खून की नदी बह गई। उसका शरीर भी घावों पर घाव लगने से लाल हो रहा था। सारे शरीर से खून बह रहा था। अन्त में हजारों

अकबर छोटी-बड़ी अनेकों हिन्दू रियासतों को जीत कर अपने राज्य को बढ़ा रहा था। गढ़ मण्डल की स्वतन्त्र रियासत उसकी दृष्टि से कैसे बच सकती थी। उसने अवसर पाकर मुग़ल सेना को सन् १५६४ ई० में गढ़ मंडल जीतने के लिए भेज दिया। आसफ खाँ सेनापति नियत किया गया।

गढ़ मंडल की प्रजा अकबर की चढ़ाई का समाचार पाकर बहुत घबराई, परन्तु दुर्गावती ने बड़े उत्साह से मुक़ाबले की तैयारी की। उसने ८००० सवार, १५०० हाथी और बहुत सी पैदल सेना इकट्ठी की। और लड़ाई के मैदान में जा डटी। रानी ने अपने शरीर पर बख्तर पहन रखा था। उसके एक हाथ में तलवार थी और दूसरे में धनुष। वह हाथी पर सवार थी।

दोनों ओर से तीरों की वर्षा होने लगी। तलवारों की बिजलियाँ चमकने लगीं। दुर्गावती और उसके पुत्र ने ऐसी वीरता से युद्ध किया कि दुश्मनों के छक्के छूट गए। उन्होंने सैकड़ों शत्रुओं को मार गिराया। रानी इधर दोनों हाथों से तलवार चलाती थी, उधर उत्साह भरे वचन कह कर सेना का दिल बढ़ाती थी। वीर

राजपूतों ने शेर की तरह बढ़-बढ़ कर शत्रुओं पर आक्रमण किए। आसफखां ने अनेक बार बड़ी लड़ाइयाँ जीती थीं, परन्तु आज उसे भी नीचा देखना पड़ा। मुगल सेना घबरा उठी परन्तु इतने में रात हो गई, फलतः अंधेरा छा जाने से युद्ध बन्द कर दिया गया।

राजपूत वीरों ने अगले दिन प्रातःकाल बड़ी वीरता से युद्ध करने का निश्चय किया, परन्तु धूर्त आसफ खाँ ने रात ही में राजपूतों पर धावा बोल दिया। रात में युद्ध न करने का नियम भंग कर दिया गया। दुर्गावती अपनी सेना को लिए-एक तंग घाटी में खड़ी हो गई। उसका वीर पुत्र तलवार हाथ में लिए शेर की तरह गर्ज-गर्ज कर राजपूतों का उत्साह बढ़ाने लगा। परन्तु शत्रुओं की शक्ति अचानक आक्रमण करने के कारण बड़ी प्रबल हो रही थी। वीरवल्लभ बहुत बुरी तरह घायल हुआ।

अब दुर्गावती दोनों हाथों में तलवार खींचे घोड़े पर सवार आगे आई और बड़ी वीरता से युद्ध किया। वह मुँह में घोड़े की लगाम पकड़े हुए थी और दोनों हाथों से तलवार चला रही थी। खून की नदी बह गई। उसका शरीर भी घावों पर घाव लगने से लाल हो रहा था। सारे शरीर से खून बह रहा था। अन्त में हजारों

शत्रुओं को मौत के घाट उतार कर बड़ी वीरता से युद्ध करती हुई वह युद्ध के मैदान में परलोक सिधार गई।

वह देवी आज भी जीवित है। मरी कहाँ है शरीर तो सबका छूटता है। शरीर का छूटना, मरना नहीं है। उसका नाम भारतीय इतिहास में सदा के लिए अमर हो गया है। कौन कहता है वह मर गई?

जैन धर्म अहिंसा पर बहुत जोर देता। परन्तु वह यह कभी नहीं कहता कि तुम शत्रुओं से अपने देश की रक्षा न करो, कायर बन कर हर किसी की गुलामी स्वीकार कर लो। जैन इतिहास की सिंहिका रानी विख्यात है, जिसने अयोध्या पर आक्रमण करने वाले शत्रुओं को परास्त कर जैन धर्म के गौरव की रक्षा की थी। अहिंसा की आड़ में कायरता का पोषण करना पाप है। कायर होने से बचो। अपने देश और धर्म की रक्षा के लिए साहस के साथ अपना सब कुछ निछावर कर दो।

अभ्यास

१—दुर्गावती कौन थी, कहां की थी?
२—दुर्गावती का युद्ध किस से हुआ?
३—यह कहानी अपनी जबानी सुनाओ?
४—जैन धर्म की अहिंसा क्या कहती है?
५—क्या अहिंसा का अर्थ कायरता है?